

राष्ट्रवादी आंदोलन और गांधीवादी आंदोलनों का महिला शिक्षा पर प्रभाव

डॉ. विनीता मिश्रा ¹, नीलू देवी ²

¹ असिस्टेंट प्रोफेसर, मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग सदनलाल सांवलदास खन्ना महिला महाविद्यालय प्रयागराज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, उत्तर प्रदेश, भारत

² मध्यकालीन एवं आधुनिक इतिहास विभाग सदनलाल सांवलदास खन्ना महिला महाविद्यालय प्रयागराज, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, उत्तरप्रदेश, भारत

सारांश

भारत में महिलाओं की शिक्षा का विकास एक जटिल कहानी है जो उपमहाद्वीप की राजनीतिक आजादी की लड़ाई से गहराई से जुड़ी हुई है। औपनिवेशिक शासन से पहले और शुरुआती दौर के भारतीय समाज में, महिलाओं के लिए औपचारिक शिक्षा तक पहुँच पर पितृसत्तात्मक सोच, पर्दा प्रथा और बाल विवाह जैसी व्यापक कुरीतियों के कारण बहुत ज्यादा रोक-टोक थी। शिक्षा मुख्य रूप से पुरुषों का अधिकार थी, जिससे महिलाएँ घर-गृहस्थी तक ही सीमित रह गईं और सार्वजनिक बौद्धिक जीवन से दूर रहीं। यह शोध पत्र बताता है कि कैसे भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन, और खासकर महात्मा गांधी द्वारा अपनाई गई जन-लामबंदी की रणनीतियों ने एक ऐसी बड़ी सामाजिक क्रांति को जन्म दिया जिसने महिलाओं की शिक्षा को सबके लिए सुलभ बनाया। 19वीं सदी की शुरुआत के समाज सुधारकों का दायरा सीमित और पितृसत्तात्मक थाकूवे बस ऐसी पत्नियाँ और माताएँ बनाना चाहते थे जो पढ़ी-लिखी होंकलेकिन 20वीं सदी के राजनीतिक संघर्ष में ब्रिटिश साम्राज्यवाद के खिलाफ लड़ाई जारी रखने के लिए महिलाओं की सक्रिय सार्वजनिक भागीदारी की ज़रूरत थी। गांधी के क्रांतिकारी नज़रिए ने महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी और बौद्धिक जागृति को पारंपरिक पारिवारिक ढाँचे के खिलाफ नारीवादी विद्रोह के तौर पर नहीं, बल्कि मातृभूमि के प्रति एक पवित्र देशभक्तिपूर्ण कर्तव्य और नैतिक जिम्मेदारी के तौर पर पेश किया। 'नई तालीम' (बुनियादी शिक्षा) को बढ़ावा देने, समानता पर आधारित आश्रमों की स्थापना और सार्वजनिक विरोध-प्रदर्शनों व औपनिवेशिक जेलों में महिलाओं की मौजूदगी को सामान्य बनाने के ज़रिए, गांधीवादी आंदोलनों ने अनजाने में ही शिक्षा के व्यापक और वैकल्पिक दायरे तैयार किए। चरखा कातना और सविनय अवज्ञा आंदोलन में हिस्सा लेना जैसी गतिविधियाँ अनौपचारिक सामाजिक-राजनीतिक शिक्षा के सशक्त माध्यम बन गईं, जिन्होंने लाखों महिलाओं को अभूतपूर्व नेतृत्व कौशल, आर्थिक आत्मनिर्भरता और राजनीतिक चेतना से युक्त किया। यह शोध पत्र तर्क देता है कि राष्ट्रीय आजादी और सामाजिक मुक्ति को रणनीतिक रूप से आपस में जोड़ने से रुढ़िवादी सामाजिक विरोध को सफलतापूर्वक पार किया गया और महिलाओं की स्कूली शिक्षा से जुड़े कलंक को हमेशा के लिए खत्म कर दिया गया। इस दौर की जन-लामबंदी ने महिला नेताओं की एक सशक्त पीढ़ी को जन्म दिया, जिन्होंने बाद में बड़े पैमाने पर शैक्षिक सुधारों को संस्थागत रूप दिया। अंत में, यह अध्ययन इस नतीजे पर पहुँचता है कि राष्ट्रवादी और गांधीवादी दौर ने राजनीतिक आजादी हासिल करने से कहीं ज्यादा उपलब्धियाँ हासिल कीं; उन्होंने आधुनिक भारतीय गणराज्य के लिए ज़रूरी वैचारिक और संवैधानिक आधार तैयार किया। महिलाओं की शिक्षा को एक दुर्लभ खैराती सुविधा से बदलकर एक अविच्छेद्य, मौलिक मानवाधिकार बनाने में सफल होकर, इन ऐतिहासिक आंदोलनों ने यह सुनिश्चित किया कि नया आजाद देश लैंगिक समानता, बौद्धिक सशक्तिकरण और राष्ट्र-निर्माण की निरंतर प्रक्रिया में महिलाओं को ज़रूरी और समान भागीदार के तौर पर मान्यता देने जैसे स्थायी सिद्धांतों पर खड़ा हो।

मुख्यशब्द: राष्ट्रवादी आंदोलन, मकतब, वुड्स डिस्पैच, पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण, स्वदेशी आंदोलन, सत्याग्रह

भूमिका

भारत में महिला शिक्षा का विकास क्रम 19वीं और 20वीं शताब्दी के सामाजिक-राजनीतिक जागरण से अटूट रूप से जुड़ा हुआ है। पूर्व-औपनिवेशिक और प्रारंभिक औपनिवेशिक भारत में, महिलाओं के लिए शैक्षिक परिदृश्य अंधकारमय था, जो काफी हद तक पितृसत्तात्मक मानदंडों, पर्दा प्रथा, बाल विवाह और घरेलू क्षेत्र में महिलाओं के निर्वासन से बाधित था। औपचारिक शिक्षा लगभग विशेष रूप से एक पुरुष विशेषाधिकार था, जबकि महिलाओं से केवल घरेलू कर्तव्यों और धार्मिक अनुष्ठानों में महारत हासिल करने की उम्मीद की जाती थी। हालाँकि, भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन के आगमन ने इस प्रतिमान को मौलिक रूप से बदल दिया। जैसे-जैसे ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के खिलाफ संघर्ष तेज हुआ, भारतीय नेताओं ने महसूस किया कि सामाजिक मुक्ति के बिना राजनीतिक मुक्ति असंभव थी।

राष्ट्रवादी आंदोलन ने भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका को पुनः परिभाषित करने के लिए एक उत्प्रेरक के रूप में कार्य किया। 19वीं शताब्दी में प्रारंभिक समाज सुधारकों ने महिलाओं के अधिकारों पर चर्चा की शुरुआत की, लेकिन यह 20वीं शताब्दी के राष्ट्रवादी आंदोलन, जो की एक जन आंदोलन था, जिसने बड़े

पैमाने पर महिला शिक्षा के लिए संरचनात्मक ढांचा प्रदान किया। इस युग में एक गहरा वैचारिक बदलाव देखा गया, महिलाओं को अब केवल सुरक्षा की आवश्यकता वाले विषयों के रूप में नहीं देखा जाता था, बल्कि राष्ट्र निर्माण प्रक्रिया में आवश्यक भागीदारों के रूप में देखा जाने लगा। महिलाओं को शिक्षित करना सभ्यता की प्रगति और राष्ट्रीय पुनरुत्थान का पर्याय बन गया। व्यापक राष्ट्रवादी आंदोलन और महात्मा गांधी की विचारधाराओं के विशिष्ट, परिवर्तनकारी प्रभाव का विश्लेषण करके, यह लेख इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे भारतीय स्वतंत्रता के लिए संघर्ष प्रारंभिक स्तर पर अनजाने में, फिर भी शक्तिशाली रूप से, उपमहाद्वीप में महिला शिक्षा और सशक्तिकरण के सबसे बड़े उत्प्रेरकों में से एक बन गया।

राष्ट्रवादी आंदोलन से पहले शिक्षा की स्थिति—

राष्ट्रवादी और गांधीवादी प्रभाव को पूरी तरह समझने के लिए, 19वीं सदी के मध्य से पहले महिलाओं की शिक्षा की खराब हालत को समझना ज़रूरी है। औपनिवेशिक शासन से पहले और शुरुआती दौर में, महिलाओं के लिए औपचारिक शिक्षा लगभग न के बराबर थी। स्थानीय शिक्षण संस्थान, जैसे पाठशालाएँ (हिंदू

प्राथमिक स्कूल) और मकतब (इस्लामिक प्राथमिक स्कूल), लगभग पूरी तरह से पुरुषों के लिए ही थे। जूयादातर भारतीय लड़कियों के लिए शिक्षा पूरी तरह से अनौपचारिक थी और घर तक ही सीमित थी। इसमें मुख्य रूप से घर का प्रबंधन, खाना पकाना, बच्चों की देखभाल और धार्मिक रीति-रिवाजों का पालन करना शामिल था। शिक्षा से यह भारी कमी सिर्फ प्रशासनिक चूक नहीं थी, बल्कि कठोर सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं का नतीजा थी। कई गहरी जड़ें जमा चुकी प्रथाओं ने लड़कियों को शिक्षा पाने से सक्रिय रूप से रोका:

बाल विवाह: बाल विवाह तत्कालीन समाज की एक प्रमुख सामाजिक समस्या थी। इस कुप्रथा के पनपने और स्थायित्व स्वरूप प्राप्त करने में अशिक्षा ने प्रमुख भूमिका निभाई। इस सामाजिक कुप्रथा को समाप्त करने के लिए अनेकों सामाजिक कार्यकर्ताओं, संगठनों, सामाजिक सुधार आंदोलनों ने अपनी भागीदारी निभाई।

पर्दा प्रथा: उपमहाद्वीप के कई हिस्सों में प्रचलित महिलाओं को अलग-थलग रखने की इस प्रथा ने महिलाओं की आवाजाही को बुरी तरह सीमित कर दिया, जिससे सम्मानित परिवारों के लिए पब्लिक स्कूलों में जाना सांस्कृतिक रूप से असंभव हो गया।

अंधविश्वास और पितृसत्तात्मक मान्यताएँ: एक व्यापक, बेबुनियाद अंधविश्वास थाकृष्णसकर कुछ उच्च-जाति समुदायों में—कि लड़की को शिक्षित करने से कम उम्र में ही विधवा होने का खतरा हो सकता है। इसके अलावा, पितृसत्तात्मक नियमों का मानना था कि एक शिक्षित महिला विद्रोही हो सकती है और पारंपरिक पारिवारिक पदानुक्रम को बिगाड़ सकती है।

शुरुआती औपनिवेशिक हस्तक्षेपों ने इस सच्चाई को बदलने के लिए बहुत कम काम किया। हालाँकि ईसाई मिशनरियों ने 1820 के दशक में लड़कियों के लिए पहले औपचारिक डे-स्कूल (दिन में चलने वाले स्कूल) स्थापित किए, लेकिन स्थानीय लोगों ने उन्हें बहुत संदेह की नज़र से देखा, क्योंकि उन्हें डर था कि इसके पीछे का मकसद धर्म परिवर्तन है। ब्रिटिश औपनिवेशिक सरकार ने दशकों तक स्थानीय सामाजिक रीति-रिवाजों में दखल न देने की नीति अपनाए रखी। 1854 के 'वुड्स डिस्पैच' के बाद ही औपनिवेशिक राज्य ने आधिकारिक तौर पर महिला शिक्षा के महत्व को पहचाना और अनुदान (ग्रांट-इन-एड) की पेशकश की¹। हालाँकि, सरकारी प्रयास बहुत कम थे और उन्हें हमेशा फंड की कमी का सामना करना पड़ा। नतीजतन, जब तक राष्ट्रवादी सुधारकों ने कदम नहीं उठाया, तब तक क्लासरूम में महिला का होना एक अजीब बात मानी जाती थी और रूढ़िवादी समाज इसे बुरी नज़र से देखता था।

राष्ट्रवादी आंदोलन और शिक्षा

भारतीय राष्ट्रवादी आंदोलन और महिला शिक्षा के बीच संबंध अलग-अलग चरणों के माध्यम से विकसित हुए, जिसकी शुरुआत सामाजिक सुधार से हुई और राजनीतिक जन आंदोलन में इसकी परिणति हुई। 19वीं शताब्दी के मध्य से अंत तक, राजा राम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विद्यासागर, ज्योतिराव फुले और सावित्रीबाई फुले जैसे सुधारकों ने महिला शिक्षा के लिए आधारशिला रखी। हालाँकि, उनके प्रयास, अग्रणी रहते हुए, काफी हद तक स्थानीय थे और उनका उद्देश्य "शिक्षित माताओं और पत्नियों" का निर्माण करना था जो अपने अंग्रेजी-शिक्षित पतियों के पूरक हो सकें और देशभक्त बच्चों का पालन-पोषण कर सकें। प्रवचन सुधारवादी था, फिर भी एक पितृसत्तात्मक ढांचे के भीतर संचालित होता था।

20वीं सदी की शुरुआत में राष्ट्रवादी आंदोलन की तीव्रता के साथ वास्तविक प्रतिमान परिवर्तित हुआ, विशेष रूप से स्वदेशी

आंदोलन (1905–1908)² के दौरान। जैसे-जैसे राष्ट्रवादी भावना पूरे देश में फैली, ब्रिटिश वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी संस्थानों को बढ़ावा देने के लिए पूरे परिवार की सक्रिय भागीदारी की आवश्यकता थी। सार्वजनिक रैलियों में भाग लेने, विदेशी कपड़ों की दुकानों पर धरना देने और राष्ट्रीय उद्देश्य के लिए अपने गहने दान करने के लिए महिलाएं पर्दा के दायरे से बाहर निकलीं। सार्वजनिक, राजनीतिक क्षेत्र में इस अचानक प्रवेश ने एक नए प्रकार के सामाजिक बुनियादी ढांचे की आवश्यकता पैदा कर दी। राष्ट्रवादियों ने महसूस किया कि एक अनपढ़ महिला आबादी एक आधुनिक राजनीतिक संघर्ष को प्रभावी ढंग से बनाए नहीं रख सकती है।

नतीजतन, राष्ट्रवादी एजेंडे में स्पष्ट रूप से महिलाओं की शिक्षा को राष्ट्रीय विकास के स्तंभ के रूप में शामिल किया गया। स्वदेशी शैक्षणिक संस्थान पनपने लगे, जो औपनिवेशिक राज्य के दायरे से बाहर काम कर रहे थे। उल्लेखनीय मील के पथरों में 1916 में धोंडो केशव कर्वे द्वारा एस. एन. डी. टी. महिला विश्वविद्यालय की स्थापना शामिल थी³, जो भारत में विशेष रूप से महिलाओं के लिए पहला विश्वविद्यालय था, जिसे राष्ट्रवादी नेताओं से अपार वैचारिक समर्थन मिला।

इसके अलावा, 1917 में महिला भारतीय संघ (डब्ल्यू. आई. ए.)⁴ और 1927 में अखिल भारतीय महिला सम्मेलन (ए. आई. डब्ल्यू. सी.)⁵ जैसे महिला संगठनों का उदय राष्ट्रवादी जागृति का प्रत्यक्ष उपोत्पाद था। स्वतंत्रता संग्राम में गहराई से शामिल शिक्षित महिलाओं द्वारा संचालित इन संगठनों ने महिला साक्षरता, बाल विवाह के उन्मूलन (जो लड़कियों की स्कूली शिक्षा के लिए एक प्राथमिक बाधा थी) और राजनीतिक मताधिकार के लिए अथक अभियान चलाया। राष्ट्रवादी आंदोलन ने इस प्रकार महिलाओं की शिक्षा के लिए वैचारिक औचित्य प्रदान किया, इसे पारंपरिक पारिवारिक संरचनाओं के खिलाफ विद्रोह के रूप में नहीं, बल्कि मातृभूमि की मुक्ति के लिए आवश्यक एक महान, देशभक्ति कर्तव्य के रूप में तैयार किया।

गांधीवादी विचारधारा और शिक्षा

1915 में भारतीय राजनीतिक परिदृश्य पर महात्मा गांधी के आगमन ने सार्वजनिक जीवन में महिलाओं की भागीदारी के पैमाने और प्रकृति में क्रांति ला दी⁶, जिससे उनके शैक्षिक स्थिति में मौलिक रूप से बदलाव आया। महिलाओं के बारे में गांधी की विचारधारा अपने समय के लिए कट्टरपंथी थी। उन्होंने महिलाओं की फ्कमजोर लिंग के रूप में धारणा को स्पष्ट रूप से खारिज कर दिया। इसके बजाय, उन्होंने माना कि महिलाएं नैतिक शक्ति, मौन पीड़ा और अहिंसा की क्षमता में पुरुषों की तुलना में स्वाभाविक रूप से श्रेष्ठ हैं— जो की सत्याग्रह (सत्य-शक्ति) के मूल सिद्धांतों में से एक है।

स्त्री गुणों को राजनीतिक आवश्यकता के साथ जोड़कर, गांधी ने रूढ़िवादी पितृसत्तात्मक प्रतिरोध को सफलतापूर्वक दरकिनार कर दिया। जब गांधी ने महिलाओं को असहयोग आंदोलन (1920)⁷ और सविनय अवज्ञा आंदोलन (1930)⁸ में शामिल होने का आह्वान किया तो उन्होंने उनकी भागीदारी को नारीवादी विद्रोह के रूप में नहीं, बल्कि एक पवित्र राष्ट्रीय कर्तव्य (धर्म) के रूप में तैयार किया। जिन पिताओं और पतियों ने पारंपरिक रूप से अपनी बेटियों और पत्नियों के घर छोड़ने का विरोध किया होगा, उन्हें ष्महात्मा के आह्वान का विरोध करना नैतिक रूप से असंभव लगा। इसी आधार पर महात्मा गांधी कहते हैं कि ष्मगर अहिंसा हमारे अस्तित्व का नियम है, तो भविष्य महिलाओं के साथ है। स्त्री से अधिक प्रभावी अपील हृदय को कौन कर सकता है?" औपचारिक और अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में, गांधीवादी विचारधारा का गहरा प्रभाव पड़ा। गांधी ने नई तालीम (बुनियादी शिक्षा) की अवधारणा पेश की, जिसमें समग्र शिक्षा, आत्मनिर्भरता

और बौद्धिक और शारीरिक श्रम के एकीकरण पर जोर दिया गया। नई तालीम स्वाभाविक रूप से समतावादी थी और लड़कों और लड़कियों के लिए पाठ्यक्रम के बीच कोई अंतर नहीं करती थी। महिलाओं की शैक्षिक और दैनिक दिनचर्या में चरखा (चरखा) कताई जैसी गतिविधियों की शुरुआत करके, गांधी ने उन्हें आत्मनिर्भरता, आर्थिक स्वतंत्रता और राजनीतिक एकजुटता में एक अनौपचारिक शिक्षा प्रदान की।

अनगिनत भारतीय महिलाओं के लिए, गांधी द्वारा स्थापित आश्रम (जैसे साबरमती और सेवाग्राम) वैकल्पिक शैक्षिक स्थानों के रूप में कार्य करते थे। यहाँ, महिलाओं ने जाति और लिंग बाधाओं को पार किया, बौद्धिक चर्चाएं करने लगी, प्रशासनिक कौशल सीखा, और नेतृत्व और सामुदायिक संगठन में प्रशिक्षित हुईं। नमक यात्रा और उसके बाद की जेल की यात्राओं के दौरान महिलाओं को मिली राजनीतिक शिक्षा अभूतपूर्व थी। जेल कक्षा स्वयं एक कक्षा बन गया जहाँ विविध पृष्ठभूमि की महिलाएं ज्ञान साझा करती थीं, एक-दूसरे को पढ़ना-लिखना सिखाती थीं और राजनीतिक दर्शन पर चर्चा करती थीं। गांधीवादी आंदोलनों ने प्रभावी रूप से शिक्षा का लोकतंत्रीकरण किया, इसे कुलीन औपनिवेशिक कक्षाओं से बाहर निकालकर सड़कों, आश्रमों और घरों में लाया, जिससे राजनीतिक और सामाजिक जागृति भारतीय महिलाओं की जनता के लिए सुलभ हो गई।

महिलाओं की शैक्षिक स्थिति पर प्रभाव

आधुनिक भारतीय इतिहास में महिलाओं की शिक्षा के लिए राष्ट्रवादी संघर्ष और गांधीवादी लामबंदी का मेल सबसे ताकतवर उत्प्रेरक साबित हुआ। 19वीं सदी के समाज सुधारकों ने कुछ खास सामाजिक बुराइयों को खत्म करने के लिए जो स्थानीय कोशिशें शुरू की थीं, वे आगे चलकर एक जन-आंदोलन में बदल गईं। इस आंदोलन में शिक्षा को एक बुनियादी अधिकार और राष्ट्र-निर्माण के लिए ज़रूरी शर्त माना गया। इन आंदोलनों का असर कई तरह का और गहरे संरचनात्मक बदलाव लाने वाला था। पहला, इसने महिलाओं के घर की चारदीवारी से बाहर निकलने से जुड़ी सामाजिक रूढ़ियों को तोड़ा। सार्वजनिक और राजनीतिक जीवन में महिलाओं की मौजूदगी को मान्यता मिलने से, लड़कियों का स्कूल और कॉलेज जाना स्वाभाविक रूप से सामान्य बात बन गई। दूसरा, राष्ट्रवाद और महिला शिक्षा के आपसी जुड़ाव ने सरोजिनी नायडू, कमलादेवी चट्टोपाध्याय, हंसा मेहता और अरुणा आसफ अली जैसी दमदार महिला नेताओं की एक पीढ़ी तैयार की। इन महिलाओं ने न सिर्फ आज़ादी की लड़ाई लड़ी, बल्कि शिक्षा से जुड़ी नीतियों की ज़बरदस्त पैरोकार भी बनीं। तीसरा और सबसे अहम बात यह है कि इस दौर की विरासत आज़ाद भारत के संवैधानिक ढांचे में शामिल की गई। भारतीय संविधान बनाने वाले नेताओं पर राष्ट्रवादी और गांधीवादी विचारों का गहरा असर था। उन्होंने यह पक्का किया कि नया आज़ाद गणतंत्र कानून के सामने समानता (अनुच्छेद 14)¹⁰ की गारंटी दे और लिंग के आधार पर भेदभाव (अनुच्छेद 15)¹¹ पर रोक लगाए। सभी वयस्कों को वोट देने का अधिकार और मुफ्त व अनिवार्य शिक्षा का संकल्प, 1947 से पहले के दशकों के संघर्ष की सीधी जीत थी।

निष्कर्ष

आखिरकार, राष्ट्रवादी और गांधीवादी आंदोलनों ने महिलाओं का इस्तेमाल सिर्फ राजनीतिक आज़ादी के लिए कुछ समय के लिए लड़ने वाले सैनिकों के तौर पर नहीं किया; बल्कि उन्होंने एक गहरी और कभी न पलटने वाली सामाजिक क्रांति को बढ़ावा दिया। महिलाओं की शिक्षा और सार्वजनिक भागीदारी को देशभक्ति और नैतिक कर्तव्य के सबसे बड़े कामों के तौर पर पेश करके, इन आंदोलनों ने रूढ़िवादी विरोध को असरदार ढंग से

बेअसर कर दिया और पुरानी पितृसत्ता की गहरी बेड़ियों को तोड़ दिया। जो परिवार कभी महिलाओं को घर की चारदीवारी में बंद रखने और पर्दे में रखने के सख्त नियम मानते थे, वे अब गर्व से अपनी बेटियों को स्कूलों, आश्रमों और राजनीतिक रैलियों में भेजने लगे और उनकी बौद्धिक जागृति को मातृभूमि की एक ज़रूरी सेवा मानने लगे। इस बड़े बदलाव ने आधुनिक, लोकतांत्रिक भारत की मजबूत नींव रखी। इसने एक ऐसा ढांचागत बदलाव लाया जिसमें महिलाओं की साक्षरता और बौद्धिक सशक्तिकरण को कुछ खास लोगों का विशेषाधिकार मानने के बजाय, हर किसी के लिए बुनियादी मानवाधिकार के तौर पर पहचाना जाने लगा। जब महिलाएं घर से बाहर निकलकर बहिष्कार का नेतृत्व करने, ज़मीनी स्तर के संगठनों को संभालने और राजनीतिक दर्शन पर बहस करने लगीं, तो उन्होंने साबित कर दिया कि एक आज़ाद देश को बिना पढ़ी-लिखी महिला आबादी के सहारे नहीं चलाया जा सकता। अंत में, इन ऐतिहासिक ताकतों ने यह पक्का किया कि समानता का संवैधानिक वादा उन पढ़ी-लिखी और सशक्त महिलाओं द्वारा पूरा किया जाए, जो चुपचाप आदेश मानने वाली प्रजा से बदलकर देश की लगातार हो रही तरक्की की अहम निर्माता बन गईं।

संदर्भ ग्रन्थ

1. The Wood's dispatch of 1854 and the Transformation of Indian Education System, History of Education in Pre Independence India (pp.118-133) Edi. 1, Chap. 8, Swaraj Prakashan, November 2024, New Delhi
2. 1587611963_H(H)-VI-The_Swadeshi_movement.pdf.
3. History | SNTD Women's University.
4. AIWC AND WIA: Crusade Against the Violation of Women Rights in Colonial Tamilnadu, 1927-1947 Dr. V. Venkatraman, July 2018, page 1.
5. Ibid.
6. <https://www.mkgandhi.org/biography/rtrninda.php>.
7. Impact of Non-Cooperation Movement in Indian Freedom Struggle, Dr. Iftikhar Arshad, NJESR/January2026/Volume-8/Issue-1.
8. Civil Disobedience's effect on India's Independence movement, Doli Kumari, International Journal of Education and Science Research Review, October-2019, Volume-6, Issue-5.
9. Right to Education in India: From Human Rights Perspective, Suvasmita Palita, Journal of Research in Humanities and Social Science, Volume 12 ~ Issue 4 (2024) pp: 08-12.
10. Ibid.